शब्द–ब्रह्म
E ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 अगस्त 2026
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

सम्पादकीय

अंग्रेजी का मोह

विनोबा

एक समाज सुधारक भाई ने कहा है - "अंग्रेजी ही एकमात्र ऐसी भाषा है जो भावी हिंदुस्तान की आकांक्षाएं और विचारों का उचित वाहन बन सके। हिंदुस्तान के विचार और आकांक्षाएं स्पष्टता से व्यक्त करने की शक्ति अंग्रेजी की बराबरी में ही हिंदी में भी है, ऐसा जो कुछ महानुभावों का कहना है वह मुझे स्वीकार्य नहीं।" स्वीकार्य नहीं तो नसीब आपका और उन महानुभावों का, जिन्हें 'हिंदी' (भारतीय विचार) व्यक्त करने की शक्ति हिंदी भाषा में अंग्रेजी के बराबरी में नजर नहीं आती है, अंग्रेजी से बढ़कर नहीं मालूम होती। अंग्रेजी महान भाषा है। उसमें अर्थव्यंजक शक्ति अच्छी है। लेकिन कुछ भी हो तो भी 'हिंदी' विचार वह हिंदी भाषा से अधिक अच्छी तरह कैसे व्यक्त कर सकेगी ? हिंदी भाषा से अंग्रेजी भाषा अधिक समर्थ हो तो भी 'हिंदी' विचार प्रकट करने के लिए वह अधिक समर्थ कैसे हो सकती है ? गाय की भाषा से मनुष्य की भाषा में अर्थव्यंजक सामर्थ्य अधिक है इसमें शक ही क्या ? फिर भी गाय की विशिष्ट वत्सलता व्यक्त करने का सामर्थ्य उसके मौन रंभाने में जैसा है वैसा मनुष्य की बोलने वाली भाषा में नहीं। गाय की और मनुष्य की भाषा में जितना अंतर है उसमें हिंदी और अंग्रेजी में ज्यादा अंतर तो नहीं होगा न ? पर इतनी सादी-सी बात भी समाजसुधारक भाई समझते नहीं होंगे, ऐसा नहीं। उन्हें भी समझता है। हिंदुस्तान के विचार हिंदी में समाते नहीं, ऐसा उनका कहना नहीं। 'भावी' हिंदुस्तान के विचार हिंदी भाषा में समा नहीं सकेंगे इतना ही उनका कहना है! पर इस बात का बचाव भी कैसे हो ? 'भावी' हिंदुस्तान के विचार 'आज के' हिंदी में न समाये तो भी 'भावी' हिंदी में क्यों नहीं समा सकते ? विचारों का विकास होगा तो क्या उसके साथ भाषा का विकास नहीं हो सकता ? ऐसी कल्पना कैसे कर सकते हैं ? उन महानुभाव का मुख्य दोष उनकी समाजसुधार की कल्पना में होना चाहिए। भावी हिंदुस्तान यानी 'सुधारित हिंदुस्तान। और 'सुधारित हिंदुस्तान यानी करीब-करीब अंग्रेज-स्थान ऐसी तो उनकी कल्पना नहीं न ? ऐसी कल्पना हो तो सुधारों की 'ओव्हर बाउंड्री' मारने के प्रयत्न में 'स्टंप' ही उखाड़ डाले ऐसा कहना होगा। अंग्रेज बनना हो तो खुशी से बनिए। लेकिन अंग्रेज यानी क्या यह भी समझ लें। उधार की भाषा लेकर कोई अंग्रेज नहीं बन सकता। अंग्रेजों ने अपनी भाषा कहीं से उधार नहीं लायी है। पांचों खंडों में घूमकर पुरुषार्थ की ताकत से उन्होंने अपनी भाषा उन्नत बनायी है। अंग्रेज बनना हो तो ऐसे बनें। आप भी अपनी भाषा उन्नत बना सकते हैं। आपको किस चीज की कमी है ? संस्कृत भाषा का वैभव आपके पास है। अंग्रेजी की भी मदद ले सकते हैं, लें। अपनी भाषा को समर्थ बनाएं। लेकिन इसके लिए पुरुषार्थ चाहिए। साधु-संतों ने ऐसा पुरुषार्थ किया और अध्यात्म विद्या का प्रवाह लोगों तक पहुंचाया। वे कैसे अपने विचार रख सके ? उन्हें

नहीं भाषा आड़ी आयी ? या हमारे विचार साधु-संतों से आगे निकल चुके हैं ? अगर वे आगे बढ़े नहीं होंगे तो हमारी भाषा भी अपने-आप ऊंची चढ़ेगी। ज्ञानदेव, तुलसीदासजी किसी को भाषा आड़ी नहीं आयी। पुरानी बात ही क्यों ? आज भी रविबाबू को भाषा की दिक्कत नहीं है। सच्ची बात तो यह है कि हमारा आत्मा मृतवत् हो गया है। रविबाबू जैसों का उदाहरण आँखों के सामने होते हुए भी हमें विश्वास नहीं होता। हमारा अपनी भाषा पर विश्वास नहीं, क्योंकि हमारा अपने आत्मा पर विश्वास नहीं। और इसलिए भाषा तो क्या लेकिन हमारा अपने धर्म पर भी विश्वास नहीं। इस दीन-हीन अवस्था से भगवान ही हमें छुड़ाये! इसलिए तमेव शरणं गच्छ सर्वभावेन भारत। **(विनोबा साहित्य खंड 20)**